International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182 Print ISSN: 2349-5979
Impact Factor RJIF: 5.74
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2016; Page No. 53-55

अभिहितान्वयवाद और अन्विताभिधानवाद

डॉ शिवदत्त शर्मा

पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हिप

अभिव्यक्ति के लिए भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भाषा में ध्वनियों के उचित क्रम के प्रयोग से ही शब्दों का निर्माण हो पाता है। भाषा में प्रयुक्त होने वाले सभी शब्द प्रायः सार्थक ही होते हैं परन्तु इन शब्दों की सार्थकता मानसिक स्तर पर होती है। यही कारण है कि इन शब्दों को वाक् प्रतीक भी कहा जाता है। वाक्य में प्रयुक्त होने की योग्यता रखने वाले शब्द ही पद कहलाते हैं। वाक्य का अध्ययन करते समय उसमें प्रयुक्त व्यवस्थित विभिन्न पदो ंके परस्पर सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। दूसरे शब्दों में जब शब्द व्याकरणिक योग्यता पा लेता है तो उसे पद कहा जाता है। व्याकरणिक योग्यता से भाव है कि शब्द में वाक्य बनाने की क्षमता का होना। यह भी कहा जा सकता है कि जब शब्द वाक्य में स्थान प्राप्त कर लेता है तब उसे पद कहा जाता है।

पद रचना में शारीरिक अवं मानसिक दोनों पक्ष महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पद का उच्चारणात्मक या लिखित रूप शारीरिक है, इसे देख और सुन सकते हैं। पद की सार्थकता मानसिक पक्ष है क्योंकि इसे हम मानसिक रूप से अनुभव भी कर सकते हैं, परन्तु वाक्य और पद में अन्तर है।पद तो भाषा की एक इकाई है जो व्याकरणिक योग्यता प्राप्त कर लेती है,परन्तु वाक्य भाषा की पूर्ण सार्थक इकाई है। पद अध्ययन में पदों की व्युत्पत्ति का अध्ययन किया जाता है। पद विभिन्न व्याकरणिक कोटियों–लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल, आदि के प्रयोग पद्धति के कारण ही अध्ययन के विषय हैं परन्तु वाक्य में विभिन्न पदों की स्थिति स्वरूप और योग का अध्ययन किया जाता है। पद वाक्य का एक भाग होते है। भले ही पद सार्थक इकाई है परन्तु भाषा की पूर्ण सार्थक इकाई तो वाक्य ही होता है।

अब यह प्रश्न उठता है कि पद और वाक्य में कौन अधिक महत्वपूर्ण इकाई है। यह सत्य है कि पाणिनी और पतंजलि ने पद के महत्व को स्वीकार अवश्य किया था परन्तु दोनों का यह मत था कि भाषा का आरम्भ वाक्य से ही होता है। [1] पद तो वाक्य के अवयव हैं।

मीमांसा दर्शन के दो प्रमुख आचार्यों ने पद और वाक्य के महत्व पर गम्भीर चिन्तन किया है तथा दोनों ने ही अपने अपने मत को प्रस्तुत किया है। पद को महत्वपूर्ण मानते हुए प्रसिद्ध मीमांसक आचार्य कुमारिल भट्ट ने अपने मत को प्रस्तुत किया जिसे अभिहितान्वयवाद के नाम से जाना जाता हैं। [2] इस मत के अनुसार उन्होने वाक्य की अपेक्षा पद को अधिक महत्व पूर्ण माना। उनके इस मत को पदवाद भी कहते हैं।

दूसरे मत के प्रवर्तक कुमारिल भट्ट के ही शिष्य आचार्य प्रभाकर पद की अपेक्षा वाक्य को अधिक महत्व पूर्ण मानते हैं। इस मत को अन्विताभिधानवाद कहते हैं। वाक्य को महत्व पूर्ण मानने के कारण इस मत को वाक्यवाद भी कहा जाता हैं।

इन दानों ही मतों का तुलनात्मक अध्ययन करके इस परिणाम तक पहुंचा जा सकता हे कि किस का मत अधिक महत्व पूर्ण है। इन दानों ही मतों का विश्लेषण क्रमषः इस प्रकार है–

1 अभिहितान्वयवाद अथवा पदवाद

इस मत के अनुसार पदो ंके द्वारा अभिहित या व्यक्त अर्थों की पारस्परिक अन्विति ही वाक्य है। इस का भाव यह है कि विभिन्न पदों की अन्विति पदयोग से ही वाक्य भावों को स्पष्ट करने में समर्थ होता हैं।

पाणिनि ने पद की परिभाषा देते हेए स्पष्ट उल्लेख किया है कि सुप् तिगन्तम् पदम् [3] अर्थात् सुप यानि संज्ञा विभक्ति तथा तिंड् क्रिया विभक्ति के परस्पर योग से ही पद बनता है। पदो ंके बिना वाक्य का अस्तित्व नहीं हो सकता। पदो ंके बिना वाक्य भावाभिव्यक्ति नहीं कर सकता। जब तक शब्द व्याकरणिक कोटियों को धारण नहीं करता तब तक वह वाक्य में प्रयुक्त नहीं हो सकता। इस लिए पद से पूर्व वाक्य का महत्व है तथा पदवाक्य से अधिक महत्वपूर्ण है। [4]

कुमारिल भट्ट ने ही पद को महत्व देते हुए तीन दशाओं की ओर संकेत किया है। आचार्य विश्वनाथ ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रंथ साहित्य दर्पण में इस पर प्रकाश डाला है। [5] वे इस प्रकार हैं–

1 योग्यता

पदों के परस्परिक अन्वय में बाधा न होना योग्यता कहलाता हैं। पद के अन्वय और अर्थ की प्रतीति, दोनों ही दृष्टियों से पदो ंके अन्वय में बाधा आ सकती है। बाधा आने पर अर्थ की प्रतीति असम्भव है। वास्तव में एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के साथ सम्बन्ध कराने में बाधा न होना ही योग्यता कहलाता है। अर्थ की दृष्टि से बाधा उपस्थित होने का कारण यही होता है जब किसी वाक्य में प्रयुक्त पदों में उचित अर्थ को प्रकाशित करने की योग्यता नहीं होती। उदाहरण स्वरूप इन वाक्यों को लिया जा सकता है।

क– वह आग से वृक्ष को सींचता है।
ख– दीवार खाती है।
ग– पत्थर को प्यास लगी है।

इन वाक्यों में व्याकरण के शेष सभी नियमों का अनुपालन किया गया है। कर्ता, कर्म, क्रिया सब कुछ अपनी जगह ठीक हैं। परन्तु इन वाक्यों में योग्यता सम्बन्धी दोष देखा जा सकता है। स्पष्ट है कि वृक्ष को पानी से सींचा जा सकता है आग से नहीं। इसी तरह दीवार और पत्थर निर्जीव वस्तु हैं तथा उन्हें भूख और प्यास नहीं लगती। केवल सजीव प्राणियों में ही ऐसा सम्भव है। अतः व्याकरण अथवा पदविन्यास की दृष्टि से भले ही सारे वाक्य सही हों परन्तु अर्थ की दृष्टि से सही नहीं हैं। इसी तरह लिंग, वचन के आधार पर भी व्याकरणिक त्रुटियों के कारण एवं योग्यता के अभाव के कारण उन्हें सही नहीं कहा जा सकता।

लिंग वचन आदि के कारण यह अयोग्यता चार प्रकार की होती है– 1 लिंग विषयक अयोग्यता 2 वचन विषयक अयोग्यता 3 पुरुष विषयक अयोग्यता 4 विभक्ति विषयक अयोग्यता। उदाहरण स्वरूप

लडकी खेलता है, बच्चे रोता है, आदि वाक्य अनुचित हैं तथा अर्थ प्रतिपादन में अयोग्य है।

2 आकांक्षा

आकांक्षा का शाब्दिक अर्थ है इच्छा। किसी वाक्य को सुनकर उसके अर्थ को जानने के लिए यदि अन्य पदों की इच्छा या जिज्ञासा बनी रहती है तो उसे आकांक्षा कहा जाता है। उसी वाक्य को ही पूर्ण माना जाएगा जब उसे सुनकर हमें अर्थ की प्रतीति हो जाए। यदि किसी वाक्य के सुनने के बाद, सुनने वाले को अर्थ एवं भाव का ज्ञान सही न हो तो उसे अपूर्ण वाक्य समझा जाएगा। अर्थ अधूरा रहता है और श्रोता की जिज्ञासा बनी रहती है तो उसे पूर्ण वाक्य नहीं कह सकते। उदाहरण स्वरूप अगर कोई व्यक्ति अपने मुख से दिल्ली शब्द का उच्चारण करके चुप रह जाता है तो श्रोता दिल्ली शब्द को सुनकर वक्ता के अभिप्राय को नहीं जान सकता। उसे यह जानने की आवश्यकता है कि वक्ता दिल्ली के बारे में आगे कुछ कहे और कथन को पूरा करे ताकि उसके अर्थ को जाना जा सके। इससे स्पष्ट है कि आकांक्षा का सम्बन्ध श्रोता की मानसिक स्थिति से होता है। श्रोता एक अथवा दो शब्दों को सुनकर पूर्ण अर्थ को नहीं जान सकता। श्रोता वक्ता से दिल्ली के बारे में सब कहने की आकांक्षा बनाए हुए है। जब वक्ता पूर्ण वाक्य– दिल्ली में कॅामन वेल्थ खेल होने जा रहे हैं, कह देता है तो श्रोता की आकांक्षा समाप्त हो जाती है। अतः आकांक्षा वाक्य का एक ऐसा आधार है जिसके बिना पूर्ण अर्थ की प्रतीति नहीं हो सकती।

3 आसक्ति

आसक्ति का दूसरा नाम सन्निधि भी है। आसक्ति का भाव है समीपता। वाक्य केवल व्याकरण की दृष्टि से ही सही नहीं होने चाहिएं बल्कि वाक्य में पद एक दूसरे के समीप रहने चाहिएं। वाक्य में किसी प्रकार का व्यवधान अर्थ प्रतीति में बाधा उत्पन्न करता है। यह व्यवधान भी दो प्रकार का हो सकता हे। एक तो एक पद और दूसरे पद के बीच में काल गत व्यवधान और दूसरा दोनों पदो के बीच में अनुपयुक्त पद का आ जाना। उदाहरण के लिए यदि कोई एक व्यक्ति सवेरे राम कहता है और दोपहर को जाकर मेरा कहता है तथा शाम को भाई कहता है तो उसके मुख से उच्चरित शब्द वाक्य नहीं कहे जा सकते, क्योंकि इन शब्दों के बीच कालगत व्यवधान है। इनके अर्थ में परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः वाक्स रचना करने के लिए आसक्ति हमेशा अपेक्षित रहती है।

इसी तरह वाक्य में पदों का उचित क्रम से प्रयोग होना अनिवार्य है। अगर पदों में अनुपयुक्त पद आ जाएंगे तो भी पूर्ण अर्थ की प्रतीति में बाधा उत्पन्न हो जाएगी। उदाहरण के लिए –उपन्यासकार हैं प्रेमचन्द लोक प्रिय हिन्दी के। इस वाक्य में पदों का प्रयोग तो हुआ है लेकिन क्रम उचित नहीं है अतः इन पदों से हम सही अर्थ को नहीं जान सकते। यह नियम केवल गद्य के लिए है, पद्य में नहीं।

आसक्ति का सरल अर्थ यही है कि वाक्य के पदों का क्रमानुसार उच्चारण करना अथवा लिखना, जिससे कि वे एक दूसरे के साथ या समीप रहें। अतः अभिहितान्वयवाद के अनुसार पदों द्वारा व्यक्त किए गए अर्थ के अन्वय के द्वारा वाक्य के अर्थ की प्रतीति होती है। कुमारिल भट्ट ने पद को महत्व देते हुए अभिहितान्वयवाद का प्रतिपादन किया । इसे पदवाद भी कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार वाक्य की तुलना में पदों को अधिक महत्व प्राप्त है। कुमारिल भट्ट का मानना था कि अगर पद और उनके द्वारा व्यक्त अर्थ न हो तो न तो वाक्य बन पाएगा और न ही वाक्य का ठीक अर्थ ही निकल पाएगा। अतः वाक्य की तुलना में पद का ही महत्व अधिक है, क्यों कि पदों से वाक्य बनते हैं वाक्यों से पद नहीं बनते।

इसके उपरान्त इस सिद्धान्त के विपरीत एक और सिद्धान्त सामने आया जिसका नाम है अन्विताभिधानवाद। इस सिद्धान्त का परिचय इस प्रकार है।

ख अन्विताभिधानवाद

कुमारिलभट्ट के ही शिष्य प्रभाकर ने अपने गुरु के मत के विपरीत अपना मत अन्विताभिधानवाद प्रस्तुत किया। भाषा में इस मत के द्वारा वाक्य को महत्व दिया गया हैं। इसे वाक्यवाद भी कहा जाता हैं। प्रभाकर के अनुसार भावाभिव्यक्ति में पद की अलग कोई सत्ता नहीं होती। आधुनिक भाषा वैज्ञानिक भी इस वाक्य वाद का समर्थन करते है। संस्कृत के प्रसिद्ध साहित्यकार एवं भाषा विद् भर्तृहरि ने भी वाक्य को ही महत्व देते हुए अपनी रचना वाक्यपदीय में स्पष्ट लिखा है–

पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेषु अवयवाः न च।
वाक्याद् पदानामत्यन्तं प्रविको न कश्चन।। [6]

इसके अनुसार भर्तृहरि का कहना है कि जिस प्रकार वर्णों में अवयव नहीं होते और पदों में वर्ण नहीं होते उसी प्रकार वाक्य में पद नहीं होते। इस कथन के अनुसार वाक्य की सत्ता ही वास्तविक है,शेष वर्ण और पद काल्पनिक हैं। वास्तव में इस सिद्धान्त का आधार भावाभिव्यक्ति है क्योंकि भाषा का लक्ष्य भी भावाभिव्यक्ति ही है। इस तथ्य से सभी विद्वान् सहमत भी हैं कि पूर्ण भावाभिव्यक्ति वाक्य के द्वारा ही हो सकती है। भाषा की किसी अन्य इकाई से पूर्ण भाव प्रकट नहीं हो सकता। उदाहरण स्वरूप राम पाठशाला जा रहा है में यहां ध्वनि, वर्ण, शब्द, पद, और पदो के समूह से पूर्ण अर्थ तब तक प्रकट नहीं होता जब तक जा रहा क्रिया पद की समापिका क्रिया है का प्रयोग नहीं होता। इस तरह समापिका क्रिया है के प्रयोग के बाद ही वाक्य पूर्ण हुआ और हमें अर्थ की प्रतीति हुई।

वाक्य का विभाजन करने पर ही पद का स्वरूप सामने आता है तथा पद में पूर्ण सार्थकता का भाव अभिव्यक्त नहीं होता। वाक्य में विभिन्न पदों की अन्विति अनिवार्य है। यह वाक्य की प्रमुख विशेषता कही जा सकती है।

इस सिद्धान्त के अनुसार स्पष्ट है कि भाषा की प्रथम इकाई वाक्य ही है। वाक्य में अनेक इकाइयां होतीं हैं। वर्ण, शब्द, अक्षर, पद, और वाक्य वाक्य के ही अवयव हैं। इनमें वाक्य ही एक इकाई है। एक बच्चा भी पहले वाक्य का ही प्रयोग करता है। हमारी नजर में वह ध्वनि लगता है परन्तु ध्यान से चिन्तन करने के बाद हमें पता चलता है कि वह एक शब्द भी वाक्य सदृश ही है जैसे दुधु या टॉफी आदि का बच्चे के द्वारा उच्चारण करना। ऐसे शब्द भी एक पदीय वाक्य ही होते हैं। बडे लोग भी एक पदीय वाक्यों का प्रयोग करते ही हैं। वे सभी सार्थक वाक्य होते हैं।

आज आधुनिक भाषा विज्ञान के अनुसार वाक्य को एक सार्थक इकाई के रूप में माना जाता है। इस लिए वाक्य पद की अपेक्षा अधिक महत्व पूर्ण है। इस में भी दो मत नहीं कि भाषा का उद्देश्य पूर्ण भावाभिव्यक्ति है और यह केवल वाक्य से ही सम्भव है। यह सत्य है कि भाषा की अनेक इकाइयां मिल कर ही वाक्य का निर्माण करतीं हैं तथा इस के अनुसार प्रत्येक इकाई का अपना विशिष्ट महत्व है। इस सन्दर्भ में डॉ नरेश मिश्र का कथन ध्यान देने योग्य है। वे लिखते हैं कि–

ध्वनि यदि भाषा की लघुतम इकाई है तो शब्द की सार्थकता उसकी पहचान है। इसी प्रकार यदि पद व्याकरणिक योग्यता प्राप्त भाषा की प्रमुख इकाई है, तो पूर्ण सार्थकता वाक्य की अपनी

पहचान है। वाक्य रचना में पद की बलवती भूमिका है, तो पूर्ण सार्थकता की दृष्टि से वाक्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है।

इस तरह दोनों बातों और मतों का विवेचन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य प्रभाकर गुरु का मत अधिक युक्तियुक्त और ग्राह्य है। निश्चय से वाक्य भाषा का सबसे बडा अवयव है। मनोविज्ञान की दृष्टि से भी पदवाद की अपेक्षा वाक्यवाद अधिक महत्वपूर्ण है। कारण स्पष्ट है कि वक्ता सोचने की किया वाक्य के रूप में करता है अलग अलग पदो ंके रूप में नहीं। जब व्यक्ति मानव की नश्वरता के बारे में सोचता है तभी उसके मुख से निकलता है– मानव जीवन क्षणभंगुर है। इस वाक्य को बोल कर वक्ता जहां एक ओर अपनी सोच की अभिव्यक्ति करता है वहां दूसरी ओर वह श्रोता के मन पर नश्वरता अंकित कर देता है। इस प्रकार मानव मन के चिंतन और भाषा में अन्विति बनी रहती है। वाक्य चिंतन और भाषा के समन्वय की स्वायत्तपूर्ण इकाई है। जिसमें पद उसी प्रकार समन्वित होते हैं जिस प्रकार पानी के प्रवाह में बूंदें। यह सत्य है कि बूंदों के मिलने से ही प्रवाह बनता है परन्तु प्रवाह बनने के बाद बूंदों का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। अतः पदवाद की अपेक्षा वाक्य वाद ही महत्व पूर्ण है। इसी सत को रेखांकित करते हुए भर्तृहरि ने अपनी रचना वाक्यपदीय में यह लिखा है–

वाक्याद् पदानामत्यन्तं प्रविवेको न कश्चन।[7] अर्थात् वाक्य से पृथक पदों की कोई स्वतंत्र पहचान नहीं है।

सन्दर्भ सूचि

1 आचार्य पाणिनी सिद्धान्त कौमुदी पृ 49
2 आचार्य कुमारिल भट्ट मीमांसा दर्शन
3 आचार्य पाण्नी सिद्धान्त कौमुदी पृ123
4 उपरोक्त
5 आचार्य विश्वनाथ साहित्य दर्पण पृ164
6 भर्तृहति वाक्यपदीय पृ 76
7 उपरोक्त वाक्यपदीय पृ 65